**ओ३म्**

**“जीवन की सफलता के लिए मन व इन्द्रियों पर नियंत्रण आवश्यक”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

दर्शन ग्रन्थों में कहा गया है कि **‘मन एव मनुष्याणां कारणं बन्ध मोक्षयोः’** अर्थात् मनुष्य का मन ही जीवात्मा के बन्धन और मोक्ष का कारण है। बन्धन का अर्थ जन्म व मरण के चक्र फंसना व इसके कारण होने वाले दुःख होते हैं। इन बन्धनों से मुक्ति मन को वश में करने व उसे ईश्वर व आत्मा में स्थिर कर वेदानुकूल व ज्ञानयुक्त कर्म करने से होती है। यह बात शास्त्रों में वर्णित है। कुछ ज्ञानी मनुष्य भी इसे जानते हैं परन्तु प्रायः सभी का व्यवहार इन शिक्षाओं के विपरीत ही होता है। मनुष्य जीवन में ज्ञान प्राप्ति के साधन स्वाध्याय व सच्चे निस्वार्थ भाव रखने वाले विद्वानों के उपदेशों का श्रवण हैं। इन साधनों से अर्जित ज्ञान का मनन व चिन्तन उस ज्ञान को परिपक्व व स्थिरता प्रदान करता है और वह हमारे कर्म व आचरण में स्थान पाते हैं। एक मुख्य बात यह समझने की है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है जो ईश्वर से सृष्टि की आदि में चार ऋषियों को प्राप्त हुआ था। उन ऋषियों ने ईश्वर की प्रेरणा से ब्रह्मा जी को वह ज्ञान दिया और ऋषियों ने वेदों का प्रचार प्रसार किया। यह प्रक्रिया सृष्टि के आरम्भ से चल रही है। इस प्रकार से संसार के सभी साहित्य का आधार वेद हैं। वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद स्वतः प्रमाण है। जिस प्रकार से सूर्य के प्रकाश से हम सूर्य व संसार के सभी पदार्थों को देख पाते हैं इसी प्रकार से वेद के ज्ञान से हम वेद की मान्यताओं सहित संसार के सभी ग्रन्थों की सत्य व असत्य बातों को जान पाते हैं। सत्य का ग्रहण व असत्य का त्याग हमारा कर्तव्य है, यह भी वेदाध्ययन से हमें ज्ञात होता है। धर्म कर्तव्यों को कहते हैं और वेदाध्ययन कर वेदानुकूल मान्यताओं का आचरण व व्यवहार धर्म कहलाता है, इसके विपरीत व्यवहार अधर्म व पाप कहलाते हैं।

 मनुस्मृति में धर्म के दस लक्षण बताये गये हैं। इस विषयक श्लोक है **‘धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रयनिग्रहः। धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्।।’** मनु महाराज ने इस श्लोक में धर्म के दस लक्षणों में दम व इन्द्रिय निग्रह को भी महत्वपूर्ण मानकर इनका विधान किया है। दम मन को सदा धर्म में प्रवृत्त कर अधर्म से रोक देने अर्थात् मन में अधर्म करने की इच्छा भी उत्पन्न न हो, मन की उस स्थिति को **‘दम’** कहते हैं। श्लोक में इन्द्रिय निग्रह शब्द भी आयें हैं। इनका अर्थ भी यही है कि सभी इन्द्रियों को अधर्माचरणों से रोक कर धर्म में ही सदा चलाना। यही परमात्मा हमसे अपेक्षा करते हैं। इसका कारण यह है कि सृष्टि में मनुष्य आदि सभी प्राणी ईश्वर की सन्तानें हैं। ईश्वर ने यह सृष्टि सभी प्राणियों के सुख व पुण्य व पाप कर्मों के फलों के भोग के लिए बनाई है। मनुष्यों को स्वतन्त्रतापूर्वक कर्म करने की छूट भी परमात्मा ने दी है। वेद को जानने व मानने से इस नियम व व्यवस्था का अच्छी प्रकार से पालन होता है। इसके विपरीत व्यवहार करने से ईश्वर की व्यवस्था में बाधा आती है जिस कारण ईश्वर उसकी व्यवस्था में बाधा पहुंचाने वालों को भविष्य व भावी अनेक जीवनों में दण्ड देता है। अतः ईश्वर व ईश्वर के जानने वाले, उस पर विश्वास करने, उसकी आज्ञा का पालन करने वाले ऋषियों व वेद ज्ञानियों के सत्य कर्मों को ही हमें अपनाना चाहिये जिससे हम दुःखों से दूर रहकर सुखों का भोग कर सकें।

 मन को वश में रखकर उसे धर्म में युक्त व स्थिर करने से और इन्द्रियों को विषयों का सेवन न्यूनातिन्यून, आवश्यकता से अधिक नहीं, करने से हमें ही इसका लाभ होता है। मन धर्म में लगेगा तो हम अधर्म नहीं करेंगे और अधर्म से होने वाले दुःखादि परिणामों से बच सकते हैं। धर्म में रमण करने और अधर्म से दूर रहने से हमारा शरीर भी निरोग, स्वस्थ व दीर्घजीवी बनता है। स्वस्थ रहने का एक नियम है कि हम मितभोजी हों अर्थात् कम मात्रा में हितकारी वस्तुओं का ही भोजन करें। स्वस्थ रहने का दूसरा साधन है कि हम शुद्ध वायु व जल का सेवन करें। यह शुद्ध वायु व जल हमें देवयज्ञ अग्निहोत्र करने से मिलता है। तीसरा साधन स्वस्थ व सुखी रहने का यह है कि हम सभी ऋणों से मुक्त हो कर जीवन व्यतीत करें। हम पर ईश्वर, ऋषि, माता-पिता, आचार्यों, इस भूमि माता सहित गोमाता आदि का भी ऋण होता है। इस ऋण को हमें चुकाना अर्थात् उसका भुगतान करना होता है। ज्ञानी व्यक्ति ही इस बात को समझ सकते हैं। ईश्वर का ऋण सन्ध्या व ईश्वर की स्तुति के मन्त्रों, गीतों व भजनों को गाकर चुकाया जाता है। योगाभ्यास रीति से उपासना भी इसमें सम्मिलित है। सृष्टि में परम्परा से वेद व वेदानुकूल शास्त्रों सहित अन्य ज्ञान चला आ रहा है। अतः हम पूर्व के सभी ऋषियों व पूर्वजों जिन्होंने ज्ञान को प्राप्त कर सुरक्षित किया अर्थात् उसका दूसरों में प्रचार किया, जिससे हम इस जीवन में किसी प्रकार से लाभान्वित होते हैं, ऋणी है। उनका ऋण भी हम उस ज्ञान का अध्ययन कर उसे आगे प्रचारित व प्रसारित करके कर सकते हैं। माता-पिता ने हमें जन्म दिया व पालन किया है। इस कारण माता-पिता का भी उनकी सन्तानों पर ऋण होता है। उनकी आज्ञाओं का पालन, सेवा व सत्कार तथा उन्हें भोजन व वस्त्र सहित मीठे वचनों से सन्तुष्ट कर हम उनके ऋणों से भी उऋण हो सकते हैं। इसी प्रकार से आचार्यों का ऋण, भूमि, गोमाता व अन्य पशु-पक्षी, कृषकों, श्रमिकों आदि अनेकानेक मनुष्यों का भी ऋण होता है। अतः हमें सबका ऋण चुकाने के लिए वेदानुकूल त्यागमय जीवन व्यतीत करना ही उचित सिद्ध होता है। यही वेदाज्ञा भी है। इनसे जुड़े कर्तव्यों के पालन का नाम ही धर्म है। इनको जानना ही ज्ञान है और ज्ञान के अनुसार जीवन व्यतीत करना ही जीवन की उन्नति व धर्म पालन है।

 मन व इन्द्रियों को वश में करने से मनुष्य निरोग, स्वस्थ व दीर्घजीवी होने के साथ शरीर व इन्द्रियों की कार्य क्षमता की दृष्टि से भी सुखी होता है। ऐसा होने पर वह अधिक शुभ व कल्याणकारी कर्मों को कर सकता है। जितने अधिक शुभ कर्म हम करेंगे उतना ही उन्नति को प्राप्त करेंगे और हमारे जन्म व मरण के जो बन्धन है वह ढीले होकर मोक्ष व मुक्ति में सहायक होंगे। हमारा हृदय आत्मा व परमात्मा का निवास स्थान है। इसमें यह दो सत्तायें रहती हैं। परमात्मा सभी दुर्गुणों व दुव्यस्नों से रहित शुद्ध व पवित्र है। जीवात्मा भी वैसा बनेगा तो उसे परमात्मा का वरदान व आशीर्वाद प्राप्त होगा और विपरीत गुण, कर्म व स्वभाव हांगे तो वह दण्ड का भागी होगा। आज संसार में धर्म व सद्कर्म बहुत कम हो गये हैं। इसी कारण निर्धन हो या धनी, अज्ञानी हो या ज्ञानी, इन्द्रियों के अधिक सुखोपभोग के कारण दुःखी व रोगी है और अल्पजीवी बन गये हैं व बन रहे हैं। ऋषि दयानन्द जी के विचारों को पढ़कर प्रतीत होता है कि वैदिक काल में सभी लोग यज्ञ करते थे जिसके प्रभाव से वायु, जल व अन्नादि पदार्थ शुद्ध होने से लोग रोग रहित, सुखी व दीर्घजीवी होते थे। आज की सभी समस्याओं का प्रमुख कारण वेद विरुद्ध आचरण, ईश्वरोपासना व यज्ञ आदि न करना ही प्रतीत होता है। इसी कारण हम मोक्ष की ओर बढ़ने की अपेक्षा बन्धन व दुःखों की ओर बढ़ रहे हैं। इन सभी विषयों पर हमें विचार करना चाहिये और इसके लिए आर्ष ग्रन्थों का स्वाध्याय करना चाहिये।

 जीवन को सफल व सुखी बनाने के लिए हमें वेदानुकूल आचरण और मन सहित सभी इन्द्रियों को वश में रखने का उपाय करना होगा। यही शास्त्र सम्मत होने के साथ तर्क व युक्तियों से भी सिद्ध है। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म**

**“प्लेग रोगी के जीवन की रक्षा के लिए अपना जीवन दांव**

**पर लगाने वाले महात्मा प. रूलिया राम जी”**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

पंडित रूलिया राम जी एक ऐसे महात्मा वा महापुरुष हुवे हैं जिन्होंने एक प्लेग के लोगी की जान बचाने के लिए अपने जीवन को संकट में डाला था। इतिहास में शायद ऐसा दूसरा उदाहरण नहीं मिलता। आज इनके जीवन की कुछ प्रेरक घटनाएं प्रस्तुत कर उन्हें श्रद्धांजली दे रहे हैं।

पं. रुलिया राम जी (जन्म 14 अक्तूबर, 1857 बजवाड़ा, होशियारपुर, पंजाब में तथा मृत्यु 21 नवम्बर, 1915 को लाहौर में) वैदिक धर्म के अनुयायी, ऋषिभक्त, धर्म प्रचारक, साधु, सन्त तथा महात्माओं के शिरोमणी थे। आपने रोगियों की सेवा में एक ऐसा उदाहरण प्रस्तुत किया जिसके समान दूसरा उदाहरण इतिहास में मिलना असम्भव प्रतीत होता है। आपने इस उदाहरण से महर्षि दयानन्द की वैदिक विचारधारा व उनके व्यक्तित्व को भी यश प्रदान किया है। महात्मा हंसराज जी इस घटना से प्रभावित होकर इनका जीवन चरित लिखना चाहते थे परन्तु किन्हीं कारणों से वह यह कार्य सम्पन्न नहीं कर सके। इस कार्यों को पूरा करने का श्रेय आर्यजगत के प्रसिद्ध विद्वान ऋषिभक्त और अथक कर्मयोगी प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी को प्राप्त ह। उन्होंने इस महात्मा का लघु जीवन चरित्र **‘धरती का एक महामानव पं. रुलिया राम’** नाम से लिखा है जिसका प्रकाशन आर्य प्रकाशन, दिल्ली से सन् 1987 में हुआ था। प्रा. जिज्ञासु जी ने इस जीवन चरित को लिखकर इतिहास को सुरक्षित रखने के साथ महात्माओं से संबंधित प्रेरक जीवन साहित्य की रचना में एक उत्तम, सराहनीय एवं प्रशंसनीय कार्य किया है।

 जिस घटना का हम वर्णन करने जा रहे हैं वह मुल्तान में सन् 1908 ई. में फैले प्लेग रोग के एक रोगी की जीवन रक्षा के लिए पं. रुलियाराम जी द्वारा किये गये सेवा के एक ऐसे कार्य का अन्यतम उदाहरण है जिसे शायद कोई दूसरा व्यक्ति कदापि न कर सके। पं. रुलिया राम जी मुलतान के प्लेग प्रभावित क्षेत्र में पहुंच कर वहां अपने सहयोगियों के साथ लोगों की सेवा व उपचार कर रहे थे। यह बता दें कि उन दिनों प्लेग फैलने पर गांव के स्वस्थ लोग अपने रोगियों को ईश्वर के भरोसे छोड़ कर सुरक्षित स्थानों पर चले जाते थे। ऐसा ही इस स्थान पर भी हुआ था। गांव में प्लेग के रोगी ही मृत्यु शय्या पर पड़े अपने अन्तिम क्षण की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनके परिवार जान उन्होंने ईश्वर भरोसे छोड़ कर सुरक्षित स्थानों पर जा चुके थे। एक शाम पं. रुलियाराम जी प्लेग से पीड़ित किसी गांव की गली से होकर जा रहे थे। एक स्वयं सेवक ने उनके पास आकर कहा! पण्डित जी ! मकान में एक रोगी बहुत बुरी हालत में है। प्लेग की गिल्टी काफी बड़ी है। सम्बन्धी सब भाग गये हैं। वह व्यक्ति तड़फ रहा है। गिल्टी पर्याप्त पक गई है। रलाराम जी ने पूछा, डाटर साहब कहां है? स्वयं सेवक ने बताया कि वह बहुत समय से एक मुहल्ले में काम कर रहे हैं। इस ओर कोई भी डाक्टर अथवा वैद्य नहीं है। रलाराम जी ने स्वयंसेवक को कहा, चलो, मैं चलकर देखता हूं। वे उस रोगी के मकान पर पहुंचे। एक नन्हा-सा दीपक वहां टिमटिमा रहा था। दीपक को निकट खिसकाकर उन्होंने रोगी की गिल्टी देखी। सचमुच वह बहुत उभर आयी थी। पक जाने से वह चमक रही थी। डाक्टर को बुलाने के लिए समय न था। उनके आने तक वह गिल्टी अन्दर ही फट सकती थी। तब विष सारे शरीर में व्याप्त हो जाता। परिणाम यह होता कि रोगी निष्प्राण रह जाता। रलारामजी ने स्वयंसेवक से कहा, मैं स्वयं आपरेशन करता हूं। तुम्हारे पास कोई चाकू हो तो निकालो।

 स्वयंसेवक के पास चाकू नहीं था। रलाराम जी ने तनिक सोचकर कहा, घर में देखों, सम्भव है कोई छुरी अथवा चाकू मिल जाए। स्वयंसेवक ने दीपक उठाकर पूरे घर का कोना-कोना शीघ्रता से देखा और जब नहीं मिला तो लौटकर दीपक रखते हुए बोला, कहीं कुछ भी नहीं। जान पड़ता है कि यहां के निवासी मात्र इसी को यहां छोड़ घर का सारा सामान अपने साथ ले गये हैं। रलाराम जी ने चिन्तित स्वर में कहा, कुछ भी नहीं? परन्तु इस गिल्टी का तुरन्त आपरेशन अवश्य होना चाहिए। देखो तुम उस बिस्तर से चादर निकालो, मैं स्वयं ही यह कार्य करूंगा। स्वयंसेवक ने आश्चर्य से पूछा, कैसे करोगे? रलारामजी अपनी घुन में रुखाई से बोले, तुम देखते रहो। रलाराम जी ने कहा ‘वह चादर पकड़ा झट से।’ चादर को फाड़कर उन्होंने एक भाग से, गिल्टी के सिवाय, रोगी के समूचे शरीर को ढांप दिया। दूसरे भाग से अपना तन भी ढक लिया। तभी तीव्रता से वह नीचे झुके, दांतों से प्लेग की वह गिल्टी काट डाली। उस गिल्टी में भरी हुई पीप को होंठों से चूस-चूसकर बाहर निकालने लगे। पास पड़े पात्र में वह थूकते गए। कुछ ही समय में उन्होंने सारी गिल्टी साफ कर दी। तब पानी से अपना मुंह स्वच्छ किया, अन्दर से धोया, उसी चादर के स्वच्छ भाग से पट्टी बनाकर गिल्टी पर बांध दिया। स्वयंसेवक पं. रलाराम जी के सब कार्यों को देख कर चकित खड़ा था। वह इस अद्भुद् दृश्य को देखकर हतप्रभ होकर जड़ सा बना हुआ सम्मुख खड़ा था। उसने अपने आपको सम्भाला और सामान्य होकर पण्डित जी से कुछ कहने का प्रयास किया परन्तु उसके मुंह से शब्द नहीं निकले।

 पंडित रलाराम जी अपना कर्तव्य निभाकर प्रसन्न थे। उनका चेहरा दमक रहा था। स्वयंसेवक ने होश में आकर कहा, यह आपने क्या किया? अपना जीवन अपने-आप संकट में डाल दिया? रलाराम जी मुस्कराते हुए बोले, जीवन को एक दिन तो समाप्त होना ही है। यदि यह किसी दूसरे व्यक्ति के जीवन की रक्षा में चला जाता है तो इससे अच्छी मृत्यु और क्या होगी? यह बात कहने में सरल है परन्तु रलाराम जी ने अपने कर्तव्य को जिस खूबी से निभाया वह असम्भव नहीं तो इसे अपवाद तो माना ही जा सकता है। हमने अपने जीवन में इससे अधिक लोमहर्षक घटना न सुनी और न ही पढ़ी है। खेद है कि आजकल पाखण्डी व लोभी लोग हमारी भोलीभाली जनता का भावानात्मक शोषण कर रहे हैं। कुछ अनैतिक कार्य भी करते हैं और फिर भी अन्धभक्त जनता उनकी पूजा करती है। पं. रुलिया राम जैसे सच्चे महात्माओं और महापुरुषों का नाम भी किसी की जिह्वा पर नहीं आता। यह देश व समाज के लिए शुभ संकेत नहीं है।

 प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी ने इस घटना पर लिखा है कि डाक्टर दीवानचन्द जी ने पं. रलाराम जी का पुण्य स्मरण करते हुए लिखा है कि ‘प्लेग के रोगियों की सेवा में उन्हें उतनी-सी ही झिझक होती थी जितनी ज्वर के रोगियों से हमें होती है।’ पण्डित जी की लोक-सेवा की प्यास कभी बुझती ही न थी। एक लेखक ने उनके पवित्र भावों के विषय में यथार्थ ही लिखा है ‘पण्डित जी में त्याग था, उत्साह था, प्रचार के लिए जोश था परन्तु एक गुण पण्डित जी को परमात्मा की ओर से ऐसा मिला था जो किसी-किसी को ही मिलता है। वह है प्रबल एवं निष्काम सेवा-भाव।’ उनके जीवन काल में किसी सज्जन ने कहा था, ‘रुलिया राम जी को प्रत्येक दिन शरीर व आयु की दृष्टि से वृद्ध तथा दुर्बल बनाता है परन्तु प्रत्येक आने वाला दिन उनके सेवा-भाव को जवान बना देता है।’

उपन्यास सम्राट ऋषि दयानन्द भक्त मुंशी प्रेमचन्द जी ने अपने उपन्यास **‘वरदान’** में किसी स्थान विशेष पर प्लेग रोग से उत्पन्न स्थिति का प्रभावशाली चित्रण किया है। उसे भी हम पाठकों की जानकारी के लिए यहां प्रस्तुत कर रहे हैं--**“उस समय कुछ नगरों में प्लेग का प्रकोप हुआ। सहस्रों मनुष्य उसकी भेंट होने लगे। एक दिन बहुत कड़ा ज्वर आया, एक गिल्टी निकली और बीमार चल बसा। गिल्टी का निकलना, मानों मृत्यु का सन्देश था। क्या वैद्य, क्या डॉक्टर, किसी की कुछ न चलती थी। सैकड़ों घरों के दीपक बुझ गए। सहस्रों बालक अनाथ और सहस्रों स्त्रियॉ विधवा हो गईं। जिसको जिधर गली मिली, भाग निकला। प्रत्येक मनुष्य को अपनी-अपनी पड़ी हुई थी। कोई किसी का सहायक और हितैषी न था। माता-पिता बच्चों को छोड़कर भागे। स्त्रियों ने पुरुषों से सम्बन्ध परित्याग किया। गलियों में, सड़कों पर, घरों में जिधर देखिए, मृतकों के ढेर लगे हुए थे। दुकानें बन्द हो गईं। द्वारों पर ताले बन्द हो गए। चतुर्दिक धूल उड़ती थी। कठिनता से कोई जीवधारी चलता-फिरता दिखाई देता था और यदि कोई कार्यवश घर से निकल पड़ता तो ऐसी शीघ्रता से पॉंव उठाता, मानों मृत्यु का दूत उसका पीछा करता आ रहा है। सारी बस्ती उजड़ गई। यदि आबाद थे, तो कब्रिस्तान या श्मशान। चारों ओर डाकुओं की बन आई। दिन-दोपहर ताले टूटते थे और सूर्य के प्रकाश में सेंधें पड़ती थीं। उस दारुण दुःख का वर्णन नहीं हो सकता।”** यह भी बता दें कि यूरोप में सन् 1346 से 1353 के वर्षों में 750 से 2000 लाख लोग प्लेग के रोग से मर गये थे। कितना खतरनाक रोग है, यह इस आंकड़े से पता चलता है।

 हम स्वामी दयानन्द के सच्चे भक्त वैदिक धर्मी पं. रला राम को नमन करते हैं। हम यह तो नहीं कहते कि प्रलय आने तक पं. रुलिया राम जी का यश और कीर्ति अमर रहेंगी क्योंकि आज का समाज मत-मतान्तरों व अपने अपने वर्ग के अपने अपने पुरुषों-महापुरुषों में बंटा हुआ है जिसका आधार उच्च व श्रेष्ठ गुण-कर्म-स्वभाव न होकर अपनत्व व स्वार्थ की भावना है। यह लोग अपने श्रद्धा के आदर्शों से अधिक ज्ञानी, सेवाभावी, धर्म, देश व मानवता के लिए अपने प्राण देने वाले महापुरुषों के बारे में जानना ही नहीं चाहते। हम समझते हैं कि जो नाम मात्र के कुछ लोग अज्ञान, पक्षपात और स्वार्थों से ऊपर उठे हुए हैं वह अवश्य ही इस घटना को जानकर पं. रुलियाराम जी को धरती का महामानव अवश्य स्वीकार करेंगे। हम पुनः प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु जी की इस कृति के लिए उन्हें प्रणाम करते हैं। ईश्वर उन्हें शताधिक आयु और अच्छा स्वास्थ्य प्रदान करे। जिज्ञासु जी ने पं. रुलिया राम जी पर ‘क्या इतिहास बना गया?’ शीर्षक से एक कविता लिखी है जिसे प्रस्तुत कर हम लेख को विराम देते हैं।

**रुलियाराम अनूठा मानव, जीवन सफल बना गया। तन, मन, धन सर्वस्व लुटाकर, नाम बड़ा वह पा गया।।**

**परमेश्वर से प्यार उसे था, वह ईश्वर का प्यारा था। परमेश्वर के प्यारों में वह, अपना नाम लिखा गया।।**

**जहां कहीं भी विपदा आई, सबसे पहले पहुंचा वह। बलिदानी ज्ञानी नरनामी, कौतुक कर दिखला गया।।**

**फोड़ा जिसने चूस लिया, रोगी की जान बचाने को। आर्य जनों का रुलिया बाबा, क्या इतिहास बना गया।।**

**दुखिया दलित अनाथों के, वह कष्ट मिटाने वाला था। ओ३म् नाम का झण्डा ऊंचे, शिखरों पर फहरा गया।।**

**हंसराज से मुनि मनस्वी, मुग्ध हुए जिस जोगी पर। न जाने किस लोक में जाकर, जोगी हमें भुला गया।।**

**ईंटें, पत्थर, जूते वर्षे, फिर भी यतिवर डोले न। क्षमाशील दयानन्द का चेला, अपना रंग जमा गया।।**

**कठिन तपस्या करने वाला, प्राणों का निर्मोही वह। अमृत-वाणी वेदों वाली, घर पर सन्त सुना गया।। इति।**

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**